THE ECONOMIC TIMES

Date: 22-06-18

Palaniswami Jinping? Respect Democracy!

ET Editorials

The police is running riot in Tamil Nadu. Close on the heels of police killings in Thoothukudi, this week, the state police arrested three environment activists and detained over two dozen farmers (near Tiruvannamalai) for opposing the Salem-Chennai green expressway corridor. This is reprehensible. The detentions only show that the police can arrest people with such seeming ease and without proper investigation. Those opposing the project have accused the state of imposing an “undeclared emergency”. This is unacceptable. The 274-km, Salem-Chennai green expressway corridor, estimated to cost Rs 10,000 crore, is expected to cut travel time by half and decongest two other national highways. Reportedly, Tamil Nadu chief minister Edappadi K Palaniswami has claimed that the project will not cause any harm to the environment and that land sellers would be compensated.

Land acquisition for projects, which are meant to foster development and enrich lives, must take place as per the law. That means public hearings and addressing grievances of those who stand to lose land. Road projects are harbingers of urbanisation, prosperity and land value. Farmers are rational people and will not oppose development, if they are assured of not being shortchanged. Anyone giving up land must have a stake in the future prosperity that comes up on her erstwhile land. If farmers are assured of this, they will willingly surrender land for new projects. The particular manner in which this is done is immaterial. In UP, this took the form of upfront compensation, annuities over a period and return of a portion of the surrendered land in a developed form. In Andhra Pradesh, Chandrababu Naidu has used land pooling. What cannot work in India is riding roughshod over individual and democratic rights.

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 22-06-18

ऊर्जा सुरक्षा को बढ़ावा

संपादकीय

नीति आयोग ने परिवहन और रसोई के ईंधन के रूप में मेथनॉल के इस्तेमाल को बढ़ावा देने की जो पहल की है वह सकारात्मक है। इससे ऊर्जा और पर्यावरण संरक्षण के लक्ष्यों को एक साथ साधा जा सकता है। मेथनॉल सस्ता, प्रदूषण रहित और बेहतरीन ईंधन है जो पूरी तरह या आंशिक रूप से पेट्रोल, डीजल या घरेलू गैस को प्रतिस्थापित कर सकता है। इससे ऊर्जा के मामले में आयात पर हमारी निर्भरता कम होगी। यह एथनॉल से अलग है। एथनॉल पौधों से मिलता है। गन्ना और खाद्य तेल इसके स्रोत हैं। भारत जैसे सीमित भू संसाधन वाले देश में यह एक बाधा है। मेथनॉल को कई नवीकरणीय, गैर नवीकरणीय माध्यमों और प्रचुर मात्रा में मौजूद औद्योगिक कच्चे माल से हासिल किया जा सकता है। इनमें कृषि जैव ईंधन, शहरी कचरा, कोयला, प्राकृतिक गैस और हवा में मौजूदा कार्बन डाइ ऑक्साइड शामिल हैं। नीति

आयोग के प्रस्ताव के मुताबिक अगर स्थानीय रूप से उत्पादित और अपेक्षाकृत सस्ते मेथनॉल से कच्चे तेल का आयात 20 फीसदी भी कम हुआ तो वाहनों से होने वाले प्रदूषण में 40 फीसदी की कमी की जा सकती है। देश में मेथनॉल उत्पादन की काफी संभावना है क्योंकि हमारे यहां 125 अरब टन कोयला भंडार है। जबकि करीब 50 करोड़ टन जैव ईंधन सालाना उत्पन्न होता है।

प्राकृतिक गैस भी हमारे यहां पर्याप्त मात्रा में मौजूद है। कई देशों ने मेथनॉल को ईंधन के रूप में इस्तेमाल करने के मामले में काफी प्रगति कर ली है। भारत को उनकी बराबरी करने में काफी मेहनत करनी होगी। उदाहरण के लिए चीन दुनिया में मेथनॉल का इस्तेमाल करने वाला सबसे बड़ा देश है। वह वाहन ईंधन के 10 फीसदी को कोयला उत्पादित मेथनॉल से प्रतिस्थापित कर चुका है। अमेरिका, कई यूरोपीय देश और ऑस्ट्रेलिया भी मेथनॉल इस्तेमाल करने वाले प्रमुख देशों में शामिल हैं। अच्छी बात यह है कि सरकार इस संबंध में नीति आयोग के प्रस्ताव के क्रियान्वयन को लेकर उत्सुक नजर आ रही है। परिवहन मंत्री नितिन गडकरी के बयान से भी यह बात साफ होती है जिन्होंने संसद में कहा था कि सरकार 2022 तक कच्चे तेल के बिल में 10 फीसदी की कमी करना चाहती है। इसके लिए वह मेथनॉल को घरेलू ईंधन के रूप में विकसित करना चाहती है। रोचक बात यह है कि भारतीय रेल भी इस बात का आकलन कर रही है कि क्या वह अपने 6,000 डीजल इंजनों को एक करोड़ रुपये प्रति इंजन व्यय करके मेथनॉल से चलने वाले इंजन में बदल सकती है।

अगर ऐसा हुआ तो रेलवे का ईंधन बिल घटकर आधा रह जाएगा। जानकारी के मुताबिक मेथनॉल इंजन का एक नमूना तैयार भी हो चुका है। परंतु इस महत्त्वाकांक्षी मेथनॉल परियोजना के नुकसान भी हो सकते हैं, भले ही तकनीकी रूप से उनसे निजात पाई जा सके। मेथनॉल से चलने वाले वाहन हालांकि प्रदूषणरहित होते हैं लेकिन कोयले से मेथनॉल बनाने के दौरान बड़े पैमाने पर कार्बन डाइ ऑक्साइड निकलती है। इस गैस को या तो कहीं भंडारित करना होगा या फिर इसका इस्तेमाल मेथनॉल संयंत्रों में बिजली बनाने में करना होगा। इसे मेथनॉल के रूप में पुनर्चक्रित भी किया जा सकता है। कुछ देश ऐसा कर भी रहे हैं। बहरहाल, इसके लिए जरूरी तकनीक में अभी काफी काम करना होगा। इसके अलावा आंतरिक दहन वाले इंजन थोड़े बहुत बदलाव के साथ केवल 15 फीसदी मेथनॉल प्रयोग में ला सकते हैं। उच्चस्तरीय मिश्रण के लिए इंजन का डिजाइन बदलना होगा। परंतु चूंकि मेथनॉल के इस्तेमाल के कुल लाभ इस प्रक्रिया में होने वाले व्यय पर भारी पड़ेंगे तो सरकार को मेथनॉल को बढ़ावा देने के क्रम में आगे बढ़ना चाहिए। इससे देश की ऊर्जा सुरक्षा में एक नया आयाम जुड़ेगा।

नईदुनिया

Date: 22-06-18

ट्रंप की नीतियों से उभरता ट्रेड वॉर

डॉ. जयंतीलाल भंडारी, (लेखक अर्थशास्त्री हैं)

भारत ने अमेरिका से आयातित कुछ कृषि व स्टील उत्पादों पर आयात शुल्क बढ़ाने की घोषणा कर दी है। गौरतलब है कि अमेरिका ने पिछले दिनों चुनिंदा स्टील एवं एल्युमिनियम सहित कई वस्तुओं पर आयात शुल्क बढ़ाया था, जिससे भारत भी प्रभावित हुआ था और उसी के जवाब में भारत की यह अमेरिका पर आर्थिक दबाव की शुरुआत है। साफ है कि

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की नीतियों के चलते ग्लोबल ट्रेड वॉर के हालात बनते दिख रहे हैं, जो निश्चित ही हमारे लिए भी चिंता की बात होनी चाहिए। बीते 19 जून को अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने कहा कि नोटबंदी और जीएसटी की मुश्किलों के बाद पटरी पर आई भारतीय अर्थव्यवस्था पर वैश्विक व्यापार युद्ध गहराने का प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और इससे भारत की विकास दर कम होने की आशंका है। हाल ही में प्रकाशित कई वैश्विक सर्वेक्षण भी इस बात की ओर इशारा करते हैं कि अमेरिका की संरक्षणवादी नीतियों की वजह से भारत के कृषि, उद्योग-कारोबार तथा सेवा क्षेत्र की मुश्किलें बढ़ेंगी। ऐसे में विदेशी संस्थागत निवेशक भी भारत से मुंह मोड़ सकते हैं और भारतीय निर्यात व भारत के शेयर व बांड्स बाजार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।

गौरतलब है कि पिछले दिनों अमेरिकी कारोबार प्रतिनिधि (यूएसटीआर) रॉबर्ट लाइटहाइजर के कार्यालय ने भारत सरकार द्वारा वस्तुओं के निर्यात को लेकर चलाई जाने वाली योजनाओं तथा निर्यात से जुड़ी इकाइयों की योजनाओं व अन्य ऐसी योजनाओं को लेकर विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) में भारत के खिलाफ कारोबारी विवाद आपत्तियों के निपटारे हेतु कठोर आवेदन प्रस्तुत किया था। अमेरिका की इन आपत्तियों पर भारत सरकार ने दलील दी कि उसके द्वारा दी जा रही विभिन्न् राहत और सुविधाएं डब्ल्यूटीओ के नियमों के तहत ही हैं। लेकिन अमेरिका अनुचित और अन्यायपूर्ण ढंग से भारत पर व्यापार प्रतिबंध बढ़ाते हुए दिखाई दे रहा है। ऐसे में भारत ने विगत 18 मई को डब्ल्यूटीओ को अमेरिका से आयातित 30 उत्पादों की सूची सौंपी थी, जिन पर वह आयात शुल्क बढ़ाना चाहता था। अब भारत ने इनमें से 29 वस्तुओं पर आयात शुल्क बढ़ा दिया है। इससे यही लगता है कि बीते कुछ दिनों से वर्ल्ड ट्रेड वॉर यानी वैश्विक व्यापार युद्ध को लेकर जो आशंका जताई जा रही थी, वह सही साबित होने लगी है। यह सही है कि अमेरिका ने द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद कोई सात दशक तक वैश्विक व्यापार, पूंजी प्रवाह और कुशल श्रमिकों के लिए न्यायसंगत आर्थिक व्यवस्था के निर्माण और पोषण में उल्लेखनीय योगदान दिया है, लेकिन अब वही वैश्विक व्यवस्था मौजूदा अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के कदमों से जोखिम में है। इस साल अमेरिका ने चीन, मेक्सिको, कनाडा, ब्राजील, अर्जेंटीना, जापान, दक्षिण कोरिया व यूरोपीय संघ के विभिन्न् देशों के साथ-साथ भारत की कई वस्तुओं पर आयात शुल्क बढ़ाए हैं।

इससे भारत समेत सभी संबंधित देशों के कारोबार पर प्रतिकूल असर पड़ना लाजिमी है। जाहिर है, इससे भारत की चिंताएं भी बढ़ गई हैं। जैसे-जैसे अमेरिका विभिन्न् देशों के आयातों पर शुल्क बढ़ा रहा है, जवाब में वे देश भी वैसा ही कर रहे हैं। इसका दुष्प्रभाव भी भारत के वैश्विक कारोबार पर पड़ रहा है। गौरतलब है कि 19 जून को अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने चीन के 200 अरब डॉलर के आयात पर 10 फीसदी शुल्क लगाने की चेतावना दी। इसके चार दिन पूर्व ही ट्रंप ने चीन से 50 अरब डॉलर मूल्य के सामान के आयात पर 25 फीसदी शुल्क लगाने को मंजूरी दे दी। इसके बाद चीन ने त्वरित प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि वह भी 50 अरब डॉलर मूल्य की अमेरिकी वस्तुओं पर 25 फीसदी शुल्क लगाएगा। इससे दुनिया की दो सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के बीच ट्रेड वॉर की आशंका बढ़ गई। उल्लेखनीय है कि इसी माह कनाडा के क्यूबेक सिटी में आयोजित जी-7 देशों का दोदिवसीय शिखर सम्मेलन भी अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप के बयानों और नीतियों की वजह से तमाशा बनकर रह गया। जी-7 के सदस्य देश कनाडा, जर्मनी, इटली, जापान, फ्रांस तथा ब्रिटेन जहां पहले ही ट्रंप की ट्रेड पॉलिसी को लेकर नाखुश थे, वहीं जी-7 सम्मेलन के तुरंत बाद अमेरिका ने इस समूह के विभिन्न् देशों से होने वाले कुछ आयातों पर नए व्यापारिक प्रतिबंध घोषित करते हुए ग्लोबल ट्रेड वॉर की आशंका को और गहरा दिया। इस संदर्भ में डब्ल्यूटीओ की भूमिका अहम हो जाती है।

डब्ल्यूटीओ एक ऐसा संगठन है, जो सदस्य देशों के बीच व्यापार तथा वाणिज्य को सहज-सुगम बनाने का उद्देश्य रखता है। यद्यपि डब्ल्यूटीओ 1 जनवरी, 1995 से प्रभावी हुआ, परंतु वास्तव में यह 1947 में स्थापित एक बहुपक्षीय

व्यापारिक व्यवस्था प्रशुल्क एवं व्यापार पर सामान्य समझौता (गैट) के नए एवं बहुआयामी रूप में अस्तित्व में आया। जहां गैट वार्ता वस्तुओं के व्यापार एवं बाजारों में पहुंच के लिए प्रशुल्क संबंधी कटौतियों तक सीमित रही थीं, वहीं इससे आगे बढ़कर डब्ल्यूटीओ का लक्ष्य वैश्विक व्यापारिक नियमों को अधिक कारगर बनाने के प्रयास के साथ-साथ सेवाओं एवं कृषि में व्यापार संबंधी वार्ता को व्यापक बनाने का रहा है। किंतु वैश्विक व्यापार को सरल और न्यायसंगत बनाने के 71 वर्ष बाद तथा डब्ल्यूटीओ के कार्यशील होने के 23 वर्ष बाद भारत सहित विकासशील देशों के करोड़ों लोग यह अनुभव कर रहे हैं कि डब्ल्यूटीओ के तहत विकासशील देशों का शोषण हो रहा है। ऐसे में दुनिया के आर्थिक विशेषज्ञ यही आशंका जता रहे हैं कि अमेरिका के संरक्षणवादी रवैये से वैश्विक व्यापार युद्ध की शुरुआत हो गई है। लिहाजा इस बारे में गंभीरतापूर्वक विचार करना जरूरी है कि यदि विश्व व्यापार व्यवस्था वैसे काम नहीं करती, जैसे उसे करना चाहिए तो डब्ल्यूटीओ ही एक ऐसा संगठन है, जो इसे दुरुस्त कर सकता है। यदि ऐसा नहीं हुआ तो दुनियाभर में घातक व्यापार लड़ाइयां 21वीं सदी की हकीकत बन जाएंगी।

बेहतर यही होगा कि विभिन्न् देश एक-दूसरे को व्यापारिक हानि पहुंचाने की होड़ में उलझने के बजाय डब्ल्यूटीओ के मंच से ही आसन्न् ग्लोबल ट्रेड वॉर के नकारात्मक प्रभावों का उपयुक्त हल निकालें। यद्यपि भारत ने कुछ अमेरिकी वस्तुओं पर आयात शुल्क बढ़ा दिया है, लेकिन अब बेहतर यही होगा कि वह इस मामले में धैर्य का परिचय दे और अमेरिका के साथ द्विपक्षीय व्यापारिक हितों के व्यापक पहलुओं पर गौर करे। यह इसलिए भी जरूरी है कि जहां भारत के लिए अमेरिका दुनिया का सबसे पहले क्रम का निर्यातक बाजार है, वहीं अमेरिका दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था भी है। पिछले वित्त-वर्ष में भारत ने अमेरिका को 47.9 अरब डॉलर मूल्य का निर्यात किया था। हम उम्मीद करें कि भारत सरकार और भारतीय उद्यमी निर्यात की नई उभरती चुनौतियों के बीच विभिन्न् देशों में विभिन्न् वस्तुओं के निर्यात के नए मौके ढूंढने की डगर पर आगे बढ़ेंगे। खासकर चीन व अन्य देशों में अमेरिकी वस्तुओं पर आयात शुल्क बढ़ने के कारण अमेरिका से आयातित सोयाबीन, तंबाकू, फल, गेहूं, मक्का तथा रसायन जैसी जो कई चीजें महंगी हो गई हैं, वहां के बाजारों में ये भारतीय उत्पाद सस्ते होने के कारण सरलता से अपनी पैठ बना सकते हैं। ग्लोबल ट्रेड वॉर की स्थिति के चलते हमारे निर्यात, निवेश व आर्थिक विकास दर घटने की जो आशंकाएं बढ़ गई हैं, उनसे निपटने हेतु सरकार को पुख्ता रणनीति के साथ आगे बढ़ना होगा।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 21-06-18

तो फिर सेंसर बोर्ड की जरूरत ही क्या

विजय गोयल, (संसदीय कार्य राज्यमंत्री)

हाल ही में आई फिल्म वीरे दी वेडिंग ने बॉक्स ऑफिस पर कई रिकॉर्ड तोड़े, लेकिन सबसे बड़ा रिकॉर्ड तोड़ा अश्लीलता का। फिल्म के संवाद को सुनकर यह सवाल फिर मौजूं हो गया है कि क्या वाकई देश में राष्ट्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड, यानी सेंसर बोर्ड की कोई जरूरत बची है? इस फिल्म में द्विअर्थी संवादों, विशुद्ध गालियों और दृश्यों का जिस तरह बार-बार इस्तेमाल हुआ है, वह चौंकाने वाला है। जो लोग वीरे दी वेडिंग को स्वस्थ हास्य फिल्म समझकर सिनेमा हॉल पहुंचे, उन्हें बड़ी शर्मिंदगी झेलनी पड़ी। यदि सेंसर बोर्ड गालियों को बैन न करने के लिए तर्क देता है कि यह समाज में प्रचलित

शब्दावली है, तो बोर्ड की जरूरत ही क्या है? उसकी जिम्मेदारी है कि फिल्म के माध्यम से समाज में प्रचलित बुराइयों को बढ़ावा न मिले और समाज में गलत संदेश न जाए। अच्छा होता कि फिल्म के शुरू में और बीच-बीच में भी 'वयस्कों के लिए' और 'अश्लील संवाद' जैसी हिदायतें दी गई होतीं। फिल्म बनाने वालों का आत्मविश्वास भी देखिए कि उन्होंने ऐसी फिल्म के लिए करोड़ों खर्च कर दिए, इस यकीन के साथ कि फिल्म पास जरूर होगी।

सेंसर बोर्ड की कैंची किस नियम से चलती है, यह समझ से परे है। इसकी दो मिसाल हैं। पहली, 1975 में आई फिल्म आंधी को लेकर हुआ विवाद, जिसके बारे में कहा गया था कि इसमें पूर्व प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के जीवन का गलत चित्रण किया गया है। विवाद बढ़ने पर इंदिरा गांधी के दो सहायकों ने फिल्म देखने के बाद रिलीज की इजाजत दी थी। लेकिन 20 हफ्तों के बाद फिल्म को फिर बैन कर दिया गया। सेंसर बोर्ड का कहना था कि हीरोइन के 'ड्रिंकिंग' और 'स्मोकिंग' वाले सीन को फिर से शूट किया जाए। दूसरी मिसाल, कुछ समय पहले आई एक फिल्म से 'साला' शब्द हटाने पर सेंसर बोर्ड का अड़ना। वह भी तब, जब हमारे यहां कमीने और रासकल्स के नाम से फिल्में ही मौजूद हैं, साला मैं तो साहब बन गया जैसे गाने हैं। और अब वीरे दी वेडिंग में आपको वह सब मिलेगा, जिसे इन दोनों उदाहरणों के हिसाब से बैन हो जाना चाहिए था। लेकिन इसके विरोध में कोई बोला ही नहीं। मैंने पिछले दिनों एक ऐसी फिल्म देखी, जिसमें कई सीन में किरदार सिगरेट का धुआं उड़ाते नजर आ रहे थे, लेकिन इस दौरान छोटे अक्षरों में एक चेतावनी आती थी, जिसे पढ़ना भी मुश्किल था। अश्लील दृश्यों के मामले में भी ऐसा हो सकता है, जिसमें दर्शक अपने विवेक के अनुसार आंखें मूंदने के लिए स्वतंत्र हों।

कुछ लोगों का कहना है कि सेंसर बोर्ड हर फिल्म की शुरुआत में एक चेतावनी लगा दे, यह फिल्म फलां श्रेणी की है, जैसे अश्लील, डरावनी, अभद्र भाषा, हिंसक आदि और देखने का फैसला दर्शकों पर छोड़ दे। उनका तर्क है कि सिगरेट और शराब की पैकिंग पर भी ऐसी ही चेतावनी होती है, बाकी इसके उपभोग करने वाले की मर्जी। इससे सेंसर बोर्ड फिल्मों में बेतुकी काट-छांट के आरोपों से भी बरी हो जाएगा। टेलीविजन खुद अपने को सेंसर करता है। समाचार चैनलों और टीवी सीरियल अपने कंटेंट की निगरानी अमूमन खुद करते हैं। क्या यही काम फिल्मों पर छोड़ा जा सकता है? बोर्ड फिल्म को सेंसर करने की बजाय जिस दर्शक-वर्ग के लिए उसे बनाया गया है, उसके अनुसार फिल्मों की रेटिंग कर दे, बस। सेंसर बोर्ड चाहे, तो सर्वे करा डाले और फिर जो समाज चाहता है, वही परोसा जाए। एक सूची बन जाए कि बस इतने प्रकार के काम, संवाद या दृश्य सेंसर होंगे। मेरा विरोध इस बात को लेकर नहीं है कि समाज में क्या स्वीकार्य है और क्या अस्वीकार्य? मेरा सवाल यह है कि हम सेंसर बोर्ड का खर्चा क्यों उठा रहे हैं? मैं समझता हूं कि सोशल मीडिया पर कंटेंट को नियंत्रित करने की अपनी सीमाएं हैं, लेकिन जहां इस पर नियंत्रण संभव है, वहां भी नहीं हो रहा है। ऐसा है, तो सेंसर बोर्ड को भंग क्यों न कर दिया जाए?

कुछ फिल्मकार भी सवाल उठाते रहे हैं कि आखिर भारत में सेंसरशिप क्यों होनी चाहिए? वे मानते हैं कि फिल्मकार खुद तय कर सकते हैं कि क्या दिखाना है और क्या नहीं? हालांकि सेंसर बोर्ड के पक्ष में खड़े होने वाले मानते हैं कि सिनेमा एक व्यावसायिक माध्यम है, जिससे निर्माताओं का फायदा भी जुड़ा है। इसे सिर्फ फिल्मकारों के विवेक पर नहीं छोड़ा जा सकता। चूंकि फिल्मों का समाज पर गहरा असर होता है, इसीलिए फिल्मकारों की जिम्मेदारी तय करने वाली संस्था की जरूरत हमेशा रहेगी। अगर फिल्मों को सिर्फ निर्माताओं के भरोसे छोड़ दिया गया, तो वे फिल्म की व्यावसायिक सफलता के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं। इसलिए प्रदर्शन से पहले सरकार तय करे कि फिल्म कोई गलत संदेश तो प्रसारित नहीं कर रही है। अगर सेंसर बोर्ड यह सब देख ही नहीं रहा, तो उसका होना बेमानी हो जाता है। फिल्मकार खुद कंटेंट तय करें, तो कम से कम सरकार पक्षपात के आरोपों से दूर रह पाएगी।

वीरे दी वेडिंग से जो सिलसिला शुरू हुआ है, वह आगे बढ़ने वाला है और हमारे घरों की मॉडर्न भाषा और संवाद का स्तर यही होने वाला है। क्या हम इस तरह की चीजों के लिए तैयार हैं? सेंसर बोर्ड जिस तरह से अनावश्यक आपत्तियों, रिलीज की तारीख करीब आने तक फिल्मों को लटकाने और दूसरे आरोपों-आलोचनाओं का शिकार रहा है, उसे देखते हुए हमें फिल्मों के आकलन की प्रक्रिया को नए तरीके से अंजाम देने की जरूरत है। जनवरी 2016 में सेंसर बोर्ड में सुधार के लिए श्याम बेनेगल की अध्यक्षता में गठित कमेटी की जो सिफारिशें मीडिया के हवाले से सामने आई हैं, उसके मुताबिक कमेटी ने कहा है कि सेंसर बोर्ड का रोल सिर्फ उतना हो, जितना उसे बनाए जाने का मकसद था, यानी सेंसर बोर्ड सिर्फ फिल्मकारों को सर्टिफिकेट दे, न कि काट-छांट पर सलाह। फिल्म पर प्रतिबंध लगाने का हक सिर्फ केंद्र सरकार को देने की सिफारिश भी कमेटी ने की है। सिनेमेटोग्राफर ऐक्ट में बदलाव अभी विचाराधीन है, इसीलिए यह वक्त बेहद मुफीद है कि समाज में भी सेंसर बोर्ड की प्रासंगिकता और वक्त के मुताबिक उसमें बदलाव पर बहस छिड़े। यह दर्शकों के भी हित में होगा।

Date: 21-06-18

ब्रिटेन से अमेरिका तक योग का आकर्षण और आशंका

महेंद्र राजा जैन, (वरिष्ठ हिंदी लेखक)

ब्रिटेन में दिवालिया हो चुके एक बहुत बडे डिपार्टमेंटल स्टोर 'ब्रिटिश होम स्टोर्स' के ऑडिट के काम में गड़बड़ी के कारण पीडब्ल्यूसी (प्राइस वाटरहाउस कूपर्स) नामक ऑडिट कंपनी पर वहां के वित्तीय नियामक (फाइनेंशियल रेगुलेटर) ने एक करोड़ पौंड का जुर्माना लगाया, जिसे बाद में कम करके साढ़े छह लाख पौंड कर दिया गया। इसी प्रकार, कंपनी के साथ 30 वर्षों से अधिक समय से जुड़े एक वरिष्ठ अधिकारी स्टीव डेनीसन पर भी पांच लाख पौंड का जुर्माना लगाया गया, जिसे बाद में घटाकर 3,25,000 पौंड कर दिया गया। उन पर 15 वर्षों तक कोई पेशेवर कार्य न करने का प्रतिबंध भी लगाया गया। वित्तीय नियामक द्वारा लगाया गया यह अर्थदंड अब तक का सबसे बड़ा जुर्माना है। इसमें कोई संदेह नहीं कि बड़ी-बड़ी कंपनियों में ऑडिट का काम भारत ही नहीं, अन्य देशों में भी बहुत तनावग्रस्त काम समझा जाता है। इसी वजह से कभी-कभी बड़े-बडे घोटाले हो जाते हैं और ऑडिटर भी घूसखोरी की चपेट में आ जाते हैं।

ऐसी स्थिति में दुनिया की चार सबसे बड़ी कंपनियों (पीडब्ल्यूसी भी उनमें एक है) में से एक 'केपीएमजी' ने इस समस्या को सुलझाने के लिए ब्रिटेन भर में फैले अपने 4,000 ऑडिटरों के लिए योग कक्षाओं में शामिल होने को अनिवार्य कर दिया है। केपीएमजी का मुख्यालय हॉलैंड में है। दुनिया भर के कार्यालयों में इसके 1,89,000 कर्मचारी कार्यरत हैं और यह कंपनी ऑडिट, टैक्स तथा वित्तीय सलाह, तीनों तरह के काम करती है। जब इस कंपनी के ब्रिटेन और दक्षिण अफ्रीका के ऑडिट कार्यालयों में भी अनियमितता की शिकायतें मिलने लगीं, तो कंपनी ने अपने कर्मचारियों की सहायता के लिए एक प्रोजेक्ट पिछले महीने शुरू किया। केपीएमजी ने अपने आडिटरों से कहा है कि वे तीन दिन का योग कोर्स

पूरा करें, जिसमें एकाग्रता के प्रशिक्षण के साथ ही उन्हें यह भी बताया जाएगा कि वे जो कार्य करते हैं, उसकी बारीकी से जांच कैसे करें? बीच के एक सत्र में यह भी बताया जाएगा कि वे अपने प्रोजेक्ट को समय पर पूरा कैसे करें और अपने ग्राहकों के खातों में आई समस्याओं का सामना कैसे करें?

ऑडिटरों पर अपना काम बहुत सावधानी से करने का दबाव हमेशा रहता है और यह कहना गलत न होगा कि यह दबाव लगातार बढ़ता ही जा रहा है। स्टाफ द्वारा किए गए ऑडिट की आलोचना के प्रश्न पर कंपनी के अधिकारियों को उसकी सहायता मानसिक व तकनीकी, दोनों ही नजरिये से करनी पड़ती है। इस वर्ष कुल मिलाकर योग के 10 सत्र होंगे, जिनमें कंपनी के सभी सदस्यों को भाग लेना अनिवार्य कर दिया गया है। वरिष्ठ अधिकारियों को भी इससे कोई छूट नहीं है। इसीलिए स्टाफ की सभी प्रकार की छुट्टियां रद्द कर दी गई हैं। प्रशिक्षण सत्र को 'केपीएमजी ऑडिट यूनिवर्सिटी' नाम दिया गया है। यह वास्तव में एक बड़ी योजना का हिस्सा है। यह कंपनी दुनिया की ऐसी-ऐसी कंपनियों के ऑडिट करती है, जिनकी गणना विश्व की 100 सबसे बड़ी कंपनियों में की जाती है। इनमें ब्रिटिश-अमेरिकन टुबैको, स्टैण्डर्ड लाइफ और ब्रिटिश टेलीफोन्स के साथ-साथ कई बहुराष्ट्रीय बैंक भी शामिल हैं। लेकिन अमेरिका और दक्षिण अफ्रीका के साथ ही ब्रिटिश सरकार ने भी केपीएमजी के काम की आलोचना की है। इसी के कारण कंपनी को अपने कार्य की गुणवत्ता में सुधार करने को बाध्य होना पड़ा है।

इसके विपरीत अमेरिका की कैथोलिक यूनिवर्सिटी के बेनेडिक्टाइन कॉलेज ने इस आधार पर वहां योग की कक्षाएं बंद कर दी हैं कि योग का संबंध पूरब के आध्यात्मिक रहस्यवाद से है, जिसका प्रभाव कॉलेज के कैथोलिक छात्रों पर पड़ सकता है। योग पर प्रतिबंध लगाए जाने का कोई कारण योगप्रेमी छात्रों को नहीं बताया गया है, जबकि वे इसे अपने दैनिक जीवन का आवश्यक अंग मानते हैं। कैन्सास सिटी के रेवरेंड फादर जॉन रीले का मानना है कि योग का हिंदू धर्म से सीधा संबंध है और यह मुख्यत: शरीर व मस्तिष्क को नियंत्रित करने का एक प्रयोग है। इसलिए कैथोलिक छात्रों को योग के प्रति आगाह करते हुए कहा गया है कि वे इसके विकल्प के रूप में अन्य साधनों का प्रयोग करें।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 21-06-18

भारत की अपेक्षा

संपादकीय

नेपाल के प्रधानमंत्री के. पी. शर्मा ओली चीन की छह दिवसीय यात्रा पर हैं। चीन सरकार द्वारा नियंत्रित अखबार ग्लोबल टाइम्स ने इस यात्रा पर तंज कसते हुए लिखा है कि भारत को ओली की यात्रा से निराश नहीं होना चाहिए क्योंकि नेपाल में उसका प्रभाव कम नहीं होगा। नेपाल एक स्वतंत्र और संप्रभु राष्ट्र है, और नेपाल समेत किसी भी देश की संप्रभुता और अखंडता का सम्मान करना भारत की पारंपरिक नीति रही है। इस राह पर चलते हुए नई दिल्ली किसी देश के आंतरिक मामले में हस्तक्षेप नहीं करती। फिर, ओली की यह दूसरी चीन यात्रा है। पहली यात्रा मार्च, 2016 में हुई थी। वह जब गठबंधन सरकार का नेतृत्व कर रहे थे। इसलिए उनकी यह यात्रा भारत के लिए निराशा की कोई वजह नहीं हो सकती। हां, इतना जरूर है कि भारत और नेपाल की सीमाएं खुली हुई हैं, इस कारण दोनों देशों की सुरक्षा व्यवस्था परस्पर जुड़ी हैं। अलबत्ता, भारत कभी नहीं चाहेगा कि नेपाल भारत विरोधी गतिविधियों का केंद्र बने।

ओली चीन समर्थक माने जाते हैं। वह चीन की महत्त्वाकांक्षी "वन बेल्ट, वन रोड' संपर्क परियोजना के साथ हैं। उन्होंने एक साक्षात्कार में स्वीकार किया है कि चीन के साथदो साल पहले हुए करार में बेल्ट और रोड परियोजना के ढांचे के तहत सहयोग को लेकर समझौता ज्ञापन (एमओयू) को लागू करने के लिए नेपाल प्रतिबद्ध है। नेपाली प्रधानमंत्री का रुख भारत को असहज करने वाला है क्योंकि चीन की यह परियोजना भारत की संप्रभुता और अखंडता को रौंदने वाली है। इसीलिए प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी विश्व मंच से इसका विरोध करने से पीछे नहीं हटते। पिछले दिनों चीन में संपन्न शंघाईसहयोग परिषद की बैठक में भी मोदी ने इस मुद्दे को गंभीरता से उठाया था। चूंकि नेपाल की भू-राजनीतिक स्थिति ऐसी है कि चीन चाहकर भी नेपाल की अर्थव्यवस्था को पूरी तरह आत्मनिर्भर नहीं बना सकता। भारत पर उसकी निर्भरता बनी रहेगी। भारत-नेपाल के बीच सदियों से धार्मिक-सामाजिक-सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। दोनों देशों के सुरक्षा हित भी परस्पर जुड़े हुए हैं। लिहाजा नेपाल को चीन के साथअपने संबंधों को मजबूत करने की दिशा में भारत के सुरक्षा हितों का ध्यान रखना होगा। प्रधानमंत्री ओली से भारत इतनी ही अपेक्षा रखता है।

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date: 21-06-18

The state is taking healthcare

National Health Protection Mission will ensure that medical emergencies do not result in people falling into poverty

J.P. Nadda, (The writer is Union minister for health and family welfare)

The government has carried out several reforms in healthcare. It assigns the highest priority to people's health and is also alive to the country's obligation under the Sustainable Development Goals (SDGs). A series of steps have been taken under the leadership of Prime Minister Narendra Modi to reform the country's healthcare. These include the formulation of the National Health Policy, 2017, enforcing a ceiling on the prices of cardiac stents and knee implants, financial aid to expecting mothers and a renewed focus on nutrition. The Ayushman Bharat (AB) Scheme is the most significant of these programmes. Under the aegis of AB, the National Health Protection Mission (NHPM) is envisaged as a game-changer for India's healthcare system. It will add weight to the government's healthcare reforms and help it fulfill the country's SDG commitments.

AB-NHPM intends to cover more than 50 crore people, which includes hospitalisation expenses for nearly 1,350 conditions over 23 clinical specialties. The beneficiaries are entitled to a premium of up to Rs 5 lakh per annum in any empaneled hospital. They need not pay for pre- or post-hospitalisation expenses. India bears a triple burden of disease: It has an unfinished agenda of eradicating communicable diseases, it is battling a growing number of non-communicable diseases and road accidents lead to large number of deaths and grievous injuries every year. Non-communicable diseases and traffic deaths alone cost the country 6.5 per cent of its GDP — a huge cost indeed. The inability to afford treatment is the leading cause for people not seeking medical care.

Currently, out-of-pocket expenditure constitutes 62 per cent of the healthcare spending of families in the country — most times, they have to dig into their savings or even take loans. Catastrophic expenditure (when a household spends more than 40 per cent of its income on health) is a major cause of

impoverishment in India and every year, this pushes around 63 million people below the poverty line. Young lives are often lost for the want of treatment to easily curable conditions. In such cases, the suffering continues years after the loss. The treatment of severe health conditions can wreak havoc on families but even common diseases like dengue, malaria or broken bones can result in a financial shock to many households. On an average, an Indian family spends Rs 22,000 a year on hospitalisation in a private hospital.

But in case of expensive treatments for diseases such as cancer, heart ailments and organ failures, most families have to borrow money. A benefit cover of Rs 5 lakh per annum, ensures that even these conditions are covered. As AB-NHPM shall take care of the affordability of healthcare, the demand for such care is expected to go up. The country's healthcare infrastructure is limited and is skewed towards the urban areas. AB-NHPM will procure secondary and tertiary care services from both the private and public sectors. The role of the private sector is critical because of its size and widespread presence. At present, 70 per cent of illness episodes are treated in private institutions. The sector can attempt to capture the opportunity in un-served rural areas.

This will improve the accessibility of healthcare services for the country's rural population. The hospitals shall be paid at a pre-agreed rate, leaving them no scope to raise prices or overcharge. Together with state schemes, AB-NHPM will cover a large chunk of the population. It will behave like a monopsony and as a result, control the prices and quality of healthcare. The public sector will have a golden opportunity to improve its services and compete with the private sector. The government has approved 24 new medical colleges at the district-level and ratified the upgradation of public hospitals and new tertiary care facilities, including six AIIMS. A public hospital will retain the money it earns through AB-NHPM. These hospitals have also benefited under the Rashtriya Swasthya Bima Yojana and state health insurance schemes. Hospitals in many states used this additional revenue to improve their infrastructure and services.

There are numerous stories about the success of public hospitals. AB-NHPM could spur them on to even greater achievements.We cannot, however, underestimate the challenges. The unprecedented scale of the scheme is a big challenge. Health insurance schemes are operational in 24 states and UTs. The coverage and scope of benefits under these schemes differ widely. AB-NHPM has evolved a structure that accommodates the unique features of state schemes while also providing flexibility to states to exercise their choice on the mode of implementation. It will merge the existing schemes into one large pool, remove inefficiencies and bring in economies of scale. The states must own the scheme while the Centre is committed to offer all possible help to overcome challenges.

It has already signed MoUs with 20 states/UTs for implementation of AB-NHPM. These MoUs provide the basis for launch of the scheme in the states/UTs and also detail the roles and responsibilities of the two stakeholders. The government is earnestly fulfilling its health-related commitments. We want to ensure that all the health-related initiatives not only achieve their stated objectives but also contribute to the nation's growth and prosperity. The prime minister wants to ensure that the real benefit of development, especially in matters related to health, reaches all sections of the society. AB-NHPM is a right step in this direction.

THE HINDU

Date: 21-06-18

The seeds of sustainability

How Zero Budget Natural Farming could be the model for the future

Sujatha Byravan is a scientist who studies science, technology and development policy

In early June, Andhra Pradesh Chief Minister N.Chandrababu Naidu announced that the State would fully embrace Zero Budget Natural Farming (ZBNF), a chemical-free method that would cover all farmers by 2024. Earlier in the year, he had revealed these plans at the meeting of the World Economic Forum in Davos. Even though this revolution has been in the works for several years, this is still a momentous occasion and highlights the way to improve the welfare of farmers, reduce the cost of farm inputs, cut toxins in food, and improve soils. With successful pilot programmes that were initiated in 2015 and partners who brought experience in different aspects needed to carry out such a transformation, Andhra Pradesh has become the first State to implement a ZBNF policy. According to Rythu Sadhikara Samstha, the agency that is implementing the ZBNF, the programme will be extended in phases.

This year, 5 lakh farmers will be covered, and at least one panchayat in each of the mandals will be shifted to this new method, bringing the programme to a tipping point. By 2021-22, the programme is to be implemented in every panchayat, with full coverage by 2024. Towards this end, substantial resource mobilisation for about ₹16,500 crore is in progress. Tenant farmers and day labourers are also being trained, to ensure that through the ZBNF, livelihoods for the rural poor will be enhanced. T. Vijay Kumar, a retired civil servant in charge of implementing the programme, views farmer-to-farmer connections as vital to its success. According to him, the role of the Agriculture Department is to just listen to farmers and motivate and assist them in different ways. Farmer's collectives such as Farmer Producer Organisations need to be established and these would be critical to sustaining the programme. The Government of India provides funding through the Rashtriya Krishi Vikas Yojana and Paramparagat Krishi Vikas Yojana. Additional resources have been made available through various philanthropic organisations.

Natural farming

Natural farming is "do nothing farming", according to Masanobu Fukuoka, a Japanese farmer who, in the 1970s, was a proponent of no-till, no chemical use in farming along with the dispersal of clay seed balls to propagate plants. He found it important to apply nature's principles in farming and developed a deep-rooted philosophy around the process. Subhash Palekar developed the ZBNF after his own efforts at chemical farming failed. He identified four aspects that are now integral to his process and which require locally available materials: seeds treated with cow dung and urine; soil rejuvenated with cow dung, cow urine and other local materials to increase microbes; cover crops, straw and other organic matter to retain soil moisture and build humus; and soil aeration for favourable soil conditions. These methods are combined with natural insect management methods when required. In ZBNF, yields of various cash and food crops have been found to be significantly higher when compared with chemical farming. For

example, yields from ZBNF plots in the (kharif) 2017 pilot phase were found on average to be 11% higher for cotton than in non-ZBNF plots. The yield for Guli ragi (ZBNF) was 40% higher than non-ZBNF.

Input costs are near zero as no fertilizers and pesticides are used. Profits in most areas under ZBNF were from higher yield and lower inputs. Model ZBNF farms were able to withstand drought and flooding, which are big concerns with regard to climate change. The planting of multiple crops and border crops on the same field has provided varied income and nutrient sources. As a result of these changes, there is reduced use of water and electricity, improved health of farmers, flourishing of local ecosystems and biodiversity and no toxic chemical residues in the environment. In early 2016, Sikkim was declared India's first fully organic State. But organic agriculture often involves addition of large amounts of manure, vermicompost and other materials that are required in bulk and need to be purchased. These turn out to be expensive for most small farm holders.

Model for other States

The changes taking place in Andhra Pradesh are a systematic scaling up of farming practices based on agro-ecological principles in opposition to the dominant chemical agriculture. Changes at this scale require many different elements to come together, but open-minded enlightened political leaders and administrators are fundamental. Over the years, Andhra Pradesh has supported and learned from its many effective civil society organisations such as the Watershed Support Services and Activities Network, Centre for Sustainable Agriculture and the Deccan Development Society. A step-by-step increase in the area covered is another notable aspect. The scaling up relies primarily on farmers and local groups — all in all, very much a bottom-up process.

With its combination of delta regions, arid and hilly tribal areas, districts in Andhra Pradesh are similar to those in other parts of the country and could therefore serve as a model for replication. The approach taken by APPI to monitor the improvements is vital to understanding the outcomes of large-scale changes that are under way; this is critical to expanding the ZBNF to other States. As ZBNF is applied in India's various agro-ecological zones, making farmers the innovators is essential. Resilient food systems are the need of the day given the variability of the monsoons due to global warming and declining groundwater in large parts of India. The drought-prone Rayalaseema region (Andhra Pradesh) is reportedly seeing promising changes already in farms with the ZBNF. More encouraging is that the programme can have a positive effect on many of the sustainable development goals through improvements in soil, biodiversity, livelihoods, water, reduction in chemicals, climate resilience, health, women's empowerment and nutrition.

Andhra Pradesh is one of the top five States in terms of farmer suicides. When asked about agricultural distress across the country, Mr. Kumar had one message for decision makers: "Don't listen to your scientists, listen to the farmers." Technology is simply the systematic application of knowledge for practical purposes and according to Mr. Kumar, the ZBNF is a technology of the future with a traditional idiom. Agricultural scientists in India have to rework their entire strategy so that farming is in consonance with nature. The dominant paradigm of chemical-based agriculture has failed and regenerative agriculture is the emerging new science. The world is at critical junctures on many planetary boundaries, and establishing a system that shows promise in improving them while supporting people sustainably is surely one worth pursuing.